रहीम का कल्पना–विधान

डॉ. आर.पी. वर्मा
असि. प्रो. एवं अध्यक्ष हिन्दी विभाग,
राजकीय महाविद्यालय गोसाईखेड़ा,
जनपद–उन्नाव, उ.प्र.

काव्य और कल्पना का अविच्छिन्न सम्बन्ध होता है। अतः कल्पना की वह तत्व है जो काव्य को अन्य शास्त्रों से पृथक करता है, और उसे काव्यत्व प्रदान करता है। कल्पना के इसी महत्व की ओर संकेत करते हुए अग्निपुराणकार ने लिखा है–

अपारे काव्य–संसारे कविरेव प्रजापतिः।
यथास्मै रोचते विश्वं तथेदं परिवर्तते।।

अर्थात् इस अपार काव्य–रूपी संसार का सृष्टा कवि ही है। अतः उसको जैसी संसार–रचना अच्छी लाती है, वह वैसी ही कर लेता है।

इस वक्तव्य से स्पष्ट है कि कवि अपनी सर्जक कल्पना के द्वारा ही अपने मनोहर एवं मनोवांच्छित काव्य–संसार की रचना करता है। इस सर्जक कल्पना की शक्ति है नव–नमोन्मेषशालिनी प्रतिभा, जिसे प्रज्ञा कहते हैं। आचार्य भामह के शब्द में–

प्रज्ञा नवनवोन्मेषाशालिनी प्रतिभा मता।
तदनुप्राणज्जीवेद् वर्णनानिपुणः कविः।।

अर्थात् नित्य नवीन रूप धारण करके उद्घाटित होने वाली प्रतिभा को प्रज्ञा कहते हैं। यही प्रज्ञा कवि की सर्जक कल्पना या शक्ति कहलाती है। काव्यास्वाद में महत्वपूर्ण योग इसी शक्ति का होता है। अतः कहा जाता है कि जो कवि जितना कल्पना–प्रणव होता है, उसका काव्य उतना ही सशक्त होता है। इसीलिए सभी आचार्यों ने, वे चाहे जिस भाषा के हां, देश–काल के हों, कल्पना के महत्व को असंदिग्ध शब्दों में स्वीकार किया है। कितने ही आचार्यों ने तो स्पष्ट या प्रकारान्तर से कल्पना को ही काव्य माना है।

कवि की सक्षम कल्पना–प्रवणता के लिए कवि का बहुज्ञ होना भी आवश्यक है। कवि जितना संवेदनशील और बहुज्ञ होगा, उसकी कल्पना का फलक उतना ही विशाल होगा, और उसका काव्य उतनी ही विविध कल्पनाओं से ओतप्रोत होगा। इसतें तनिक भी सन्देह नहीं है कि रहीम जितने कवि–हृदय थे, उतने ही बहुज्ञ भी थे। अन्य धर्मों के अतिरिक्त इनका हिन्दू–धर्म से सम्बद्ध ज्ञान भी अगाध था। यही कारण है कि इनकी संस्कृत और हिन्दी–रचनाओं में हिन्दू–समाज, धर्म तथा संस्कृति से सम्पृक्त कल्पना–चित्र प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। डॉ0 'अर्किंचन' ने रहीम की काव्य–कल्पना के विशाल क्षेत्र का उल्लेख करते हुए लिखा है–

'जहां तक हमारे चरित्र–नायक रहीम के कल्पना–विधान का प्रश्न है, वहां हम निःसंकोच कह सकते हैं कि उनके नीतिकाव्य में कल्पना का विभिन्न प्रकार से विनियोग हुआ है। रहीम के नीति–कथनों में जो एक विशेष रमणीयता एवं दुर्लभ प्रभावोत्पादकता है, उसका बहुत कुछ श्रेय उनके सफल कल्पना–विधान को है। कहीं उनकी कल्पना–स्थूल सिद्धान्तों को सूक्ष्मता से अभिव्यक्त करती है तो कहीं नीरस कथनों को सरस बनाती है। उसी का सहारा लेकर उपयोगी दुर्बोध एवं अग्राह्य, कल्याणकारी, अनास्वाद्य को स्वादु एवं

अरुचिकर को रुचिकर बनाकर पाठक के सम्मुख प्रस्तुत कर सके हैं।'

रहीम की प्रतिभा ने समाज के विभिन्न परिदृश्यों का भी सूक्ष्म अवलोकन किया है, और शास्त्रों का भी गहन अध्ययन किया है। इसीलिए इनके कल्पना–विधान में समाज और शास्त्र दोनों का ही महत्वपूर्ण योगदान है। समाज से ली गई कल्पनायें अत्यन्त भावपूर्ण है, और कवि के वक्तव्य को पूर्णतया सक्षम एवं मर्मस्पर्शी बनाने में सक्षम है। यथा–

काज परै कुछ और है, काज सरै कछु और।
रहिमन भंवरी के भए, नदी सिरावत मौर।।

समाज में एक प्रचलन यह ळै कि विवाह के उपरान्प्त मौर को नदी में प्रवाहित कर दिया जाता है। इसी प्रचलन का आश्रय लेकर रहीम ने मनुष्य की स्वार्थी प्रवृत्ति का अत्यन्त प्रभावशाली वर्णन किया है। जिस प्रकार विवाह के उपरान्त मौर को नदी में प्रवाहित कर दिया जाता है, उसी प्रकार जब तक मनुष्य का स्वार्थ रहता है, तब तक वह उस वस्तु के प्रति अत्यधिक आसक्ति रखता है, जिससे उसका स्वार्थ सिद्ध होता है। और जब उसका स्वार्थ पूरा हो जाता है तो वह उस वस्तु का पूर्णतया त्याग कर देता है।

खैंचि चढ़नि ढरनि, कहहु कौन यह प्रीति।
आज काल मोहन गही, बंस दिया की रीति।

प्राचीन काल में सागर में चलती हुई नौका आदि को प्रकाश द्वारा मार्ग दिखाने के लिए एक लम्बे बांस पर दीपक लटका दिया जाता था, जिसे आकाशदीप कहते थे। जब दीप को रखी हुई टोकरी की रस्सी को खींचा जाता था तो दीपक ऊपर चढ़ जाता था, और जब उस रस्सी को ढीली छोड़ दिया जाता था तो दीपक नीचे आ जाता था। इसी रीति का प्रयोग करते हुए कवि ने अपने आराध्य मनमोहन की प्रीति का वर्णन किया है। जब भक्त मनमोहन की आराधना करता है तो वे उदासीन हो जाते हैं, और जब भक्त उनकी आराधना में ढील कर देता है तो वे भक्त की ओर झुक जाते हैं। समाज के एक उपकरण के द्वारा कवि ने अपने आराध्य के प्रति अपनी जिस प्रीति का व्यंग्यात्मक वर्णन किया है, वह अत्यन्त भावपूर्ण है।

जेहि अंचल दीपक दुर्‌यो, हन्यो सो ताही गात।
रहिमन असमय के परे मित्र शत्रु ह्वै जात।।

समाज में प्रायः देखा जाता है कि जब व्यक्ति पर विपत्ति आती है, अथवा उसकी कोई आवश्यकता नहीं रहती तो उसके मित्र ही उसके शत्रु हो जाते हैं। जिस प्रकार, प्रकाश की आवश्यकता होने पर जो नारी–अंचल दीपक की ओट करके उसे आंधी से बुझने से बचाये रखता है, वही प्रकाश की आवश्यकता न होने पर उसे स्वयं ही बुझा देता है। यही भाव कवि ने इस दोहे में व्यक्त किया है–

जो रहीम दीपक दसा, तिय राखत पट ओट।
समय परे तें होत हैं, वाही पट की चोट।।

समाज में सहज ही जब कुछ नहीं मिलता है तो बलपूर्वक लेना पड़ता है, जैसे कुम्हार के चाक में डंडा देकर जब उसे घुमाया जाता है, तभी वही बर्तन देता है–

रहिमन चाक कुम्हार को, मांगे दिया न देइ।
छेद में डंडा डारिकै, चहै नांद लै लेइ।।

कुम्हार का चाक मांगने पर तो एक छोटा–सा दीपक भी नहीं देता, किन्तु यदि उसके छेद में डंडा डालकर उसे घुमाया जाय तो वह नांद–मिट्टी का बहुत ही बड़ा बर्तन–भी दे देता है। अतः समाज में शक्ति की ही पूजा होती है।

यों तो व्यक्ति को समाज में स्वाभिमान के साथ ही रहना चाहिए, और झूठ को झूठ तथा सत्य को सत्य ही कहना चाहिए, परन्तु एक स्थिति ऐसी भी आ सकती है जब उसे दूसरे की

हां में हां मिलाना आवश्यक हो जाता है। ऐसी अवसरवादिता बुरी नहीं, पर इसको प्रवृत्ति ही बना लेना बुरा है–

रहिमन जो रहिबो चहै, कहै वाहि के दांव।
जो बासर को निसि कहै, तौ कचपची दिखाव।।

ऐसे चापलूसों की किसी भी समाज में कमी नहीं होती।

व्यक्ति समाज में तभी सम्मानित रह सकता है, जब वह सम्पत्तिशाली हो। निर्धन व्यक्ति का समाज में ही नहीं बल्कि अपने बन्धु–बांधवों में भी अनादर होता है। इसीलिए रहीम का निश्चित मत है कि भले ही वन में निवास करना पड़े, फलों का भोग करना पड़े, किन्तु अपने बन्धुओं के मध्य निर्धन बनकर रहना उचित नहीं है–

बरू रहीम कानन भलो, बास करिय फल भोग।
बन्धु मध्य धनहीन ह्वै, बसिबो उचित न योग।।

जी मनुष्य मेंहदी बांटता है, वह स्वयं कुछ नहीं लेता, दूसरों को ही देता रहता है, फिर भी उसके हाथ भी मेंहदी से रच जाते हैं। परोपकार की महत्ता का वर्णन करने के लिए कितना उपयुक्त एवं प्रभावशाली उदाहरण कवि ने प्रस्तुत किया है–

वे रहीम नर धन्य हैं, पर उपकारी अंग।
बांटनवारे को लगे, ज्यों मेंहदी को रंग।।

वस्तुओं का विनिमय समाज का एक प्रमुख व्यापार है, वरन् समाज के अस्तित्व का महत्वपूर्ण आधार है। जो व्यक्ति समय पर सौदा कर लेता है, वह लाभ में रहता है, और जो समय को चूक जाता है, उसे पछताना पड़ता है। समाज में इसी व्यवहार के द्वारा रहीम ने एक दार्शनिक भाव को अत्यन्त प्रभावशानी अभिव्यक्ति दी है–

सौदा करो सो करि चलौ, रहिमन याही बाट।
फिर सौदा पैहौं नहीं, दूरि जान है बाट।।

रहीम ने अपनी कल्पना को सजीव बनाने के लिए सम्भवतः प्रकृति का सर्वाधिक प्रयोग किया है। ताड़ का वृक्ष छायाहीन होता है, जो मनुष्य को किसी भी प्रकार सुख नहीं दे पाता। अतः कवियों ने किसी अर्थहीन, निकम्मे व्यक्ति के लिए ताड़ वृक्ष को प्रतीम काना है। जिस प्रकार ताड़ की छाया निरर्थक है, वह कोई सुख नहीं दे पाती, उसी प्रकार अधम व्यक्ति का विश्वास करना या उससे किसी कार्य की आशा करना व्यर्थ है–

अधम बचन काको फल्यो, बैठि ताड़ की छांह।
रहिमन काम न आइ हैंश ये नीरस जग मांह।।

ईश्वर परम कृपालु और सभी का पालन–पोषण करने वाला होता है। वह तो उस अमरबेल का भी पालन करता है जिसकी जड़ ही नहीं होती। इसी अमरबेल के माध्यम से ईश्वर की परम् दयालुता एवं भरण–पोषणता का अत्यन्त भावपूर्ण वर्णन रहीम ने किया है –

अमर बेलि बिनु मूल की, प्रतिपालत है ताहि।
रहिमन ऐसे प्रभुहिं तजि, खोजत फिरिए काहि।।

जो प्रभु अमरबेल का भी पालन–पोषण करता है, वह परम कृपालु है, और ऐसे प्रभु की शरण में जाने से ही उद्धार हो सकता है।

समाज में सज्जन और दुष्ट दोनों प्रकार के जीव होते हैं। सज्जन सभी का हित करते हैं, उनके सुख–दुख में अपना सुख–दुख समझते हैं। और दुष्ट तो किसी भी काम के नहीं होते। वे तो अकारण ही दूसरों को कष्ट देते हैं। इसी भाव को रहीम ने इस कल्पना से अभिव्यक्त किया है–

आप न काहू काम के, डार पात फल फूल।
और न को रोकत फिरैं, रहिमन पेड़ बबूल।।

बबूल का वृक्ष कंटीला तो होता ही है, बिना पत्ते, फल और फूल का भी होता है। वह किसी का हित तो नहीं कर सकता, बल्कि मार्ग में चलते हुए प्राणियों का रोक–रोककर दुख देता रहता है।

दुष्ट एवं अधर्मी व्यक्ति का स्वभाव ही ऐसा होता है।

आवत काज रहीम कहि, गाढ़े अन्धु सनेह।
जीरन होत न पेड़ ज्यों, थामे बरै बरेह।।

सच्चे बन्धु–बान्धव ही संकट के दिनों में सहायक होते हैं। जब वह वृक्ष बूढ़ा हो जाता है तो उसकी जटायें ही पृथ्वी में घुसकर उसे सहारा देती हैं। कितना सामाजिक सत्य है यह !

पुरुषार्थी व्यक्ति के दिए दुखःसुख दोनों की समान होते हैं। वे न तो दुःख में दुःखी होते हैं, और न सुख में प्रसन्न। ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार डूबते और उगते सूर्य का एक–सा ही रंग होता है। अतः पुरुषार्थी व्यक्तियों का समाज बड़ा ही आदर होता है। इसके विपरीत, जो छोटे व्यक्ति होते हैं, वे समाज में कभी बड़ा पद नहीं पाते, भले ही वे कितना ही बड़ा काम क्यों न कर लें। समाज का संगठन न तो केवल बड़े व्यक्तियों से होता है और न केवल छोटे व्यक्तियों से। वरन् इन दोनों के परस्पर सहयोग से ही होता है। इस सामाजिक सत्य को कवि ने अत्यन्त मार्मिकता से इस प्रकार व्यक्त किया है–

छोटेन सो सोटै, कहि रहीम यह रेख।
सहसन को हय बांधियत, लै दमरी की मेख।।

कवि की प्रबल कल्पना और सूक्ष्म दृष्टि ने एक–एक अत्यन्त नगण्य बात से कितनी बड़ी और सही बात कह दी है। हजारों रुपये के घोड़े का मूल्य तभी होता है, जब उसके पैरों में दमड़ी की मेख जढ़ दी जाती है।

अतः कहा जा सकता है कि रहीम ने समाज की अनेक घटनाओं, व्यवहारों तथा रीति–रिवाजों के द्वारा प्रचुर नीतिपरक एवं तथ्यात्मक काव्यपूर्ण विवरण प्रस्तुत किए हैं, जिनके साथ पाठक का सहज सम्बन्ध होता है, इसीलिए पाठक उनसे अनायास ही प्रभावित हो जाता है। साधारण–सी घटना या अत्यधिक प्रचलित परम्परा को प्रभविष्णु काव्य का रूप दे देना रहीम की ही विलक्षण कवि–प्रतिभा का परिणाम है।

अपने काव्य के प्रतिपाद्य में रहीम ने प्रकृति का भी प्रचुर मात्रा में एवं प्रभावशाली शैली में वर्णन किया है। शायद ही प्रकृति का कोई कोना बचा हो, जिसमें रहीम की दृष्टि न गई हो। प्रकृति के माध्यम से व्यक्त विचारों के कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं–

अंड का बौड़ रहीम कहि, देखि सचिक्कन पान।
हस्ती–ढक्का कुल्हाड़िन सहैं, ते तरुवन आन।।

अरंड के पेड़ के पत्ते बहुत ही चिकने तथा सुन्दर होते हैं, किन्तु उसका तना बहुत ही कमजोर होता है। केवल अपने सौन्दर्य पर मुग्ध होना, और अपनी निर्बलता पर ध्यान न देना मूर्खता है। वास्तविकता तो यह है कि सुन्दरता शक्ति के साथ ही सुशोभित होती है। यही भाव कवि ने अरंड के माध्यम से प्रकट करते हुए कहा है कि वे वृक्षा तो और ही होते हैं जो हाथी का धक्का या कुल्हाड़ी का प्रहार झेल सकते हैं, अरंड नहीं। अरंड तो अपने पत्तों की सचिक्कणता पर मुग्ध ही हो सकता है।

स्वाति नक्षत्र की बूंद को लेकर अने कवियों ने सत्संगति और कुसंगति के अत्यन्त भावपूर्ण वर्णन किए हैं। रहीम ने भी इस कवि–परम्परा का सफलता से निर्वाह किया है–

कदली सीप भुजंग–मुख, स्वाति एक गुन तीन।
जैसी संगति बैठिए, तैसोई फल दीन।।

कहा जाता है कि यदि स्वाति नक्षत्र की बूंद केले में गिर जाती है तो कपूर बन जाती है, सांप के मुख में गिर जाती है तो विष बन जाती है, और सीपी में गिर जाती है तो मोती बन जाती है। जिस प्रकार यह एक ही बूंद स्थान–भेद से तीन रूप धारण कर लेती है, उसी प्रकार कोई भी

मनुष्य जैसी संगति में बैठता है, वह वैसा ही बन जाता है।

दुष्टों के साथ में रहने से सज्जन को दुःख ही मिलता है। वन में यदि बेरी और केला पास–पास उत्पन्न हो जायें तो बेरी के कांटे बिना कारण ही केले के पत्तों को चीर देते हैं–

कह रहीम कैसे निभै, बेर केर को संग।
वे डोलते रस आपने, उनके फाटत अंग।।

बेरी और केले का साथ नहीं निभ सकता, क्योंकि बरी की शाखाएं तो अपने ही आनन्द में झूमती हुई, बिना किसी कारण के, केले के पत्तों को फाड़ देती हैं।

गंगा भारत की सर्वाधिक पवित्र एवं गरिमा–सम्पन्न नदी मानी जाती है, किन्तु जब वह सागर में मिल जाती है तो उसका नाम तथा अस्तित्व सभी कुछ समाप्त हो जाता है। इसका निष्कर्ष कवि ने यही निकाला है, और सर्वथा उपयुक्त भी है, कि दूसरे के घर बिना बुलाए जाने से सभी की महिमा घट जाती है, भले ही वे कितने ही माननीय क्यों न हों–

कौन बड़ाई जलधि मिलि, गंग नाम भो धीम।
केहि की प्रभुता नहिं घटी, पर घर गए रहीम।।

समाज में धन का अत्यधिक महत्व माना जाता है। जिस व्यक्ति के पास धन होता है, सभी उसके सहायक होते हैं और सभी उसके हितैषी। यही भाव रहीम ने इस दोहे में व्यक्त किया है–

जब लगि बित्त न आपुने, तब लगि मित्र न कोय।
रहिमन अम्बुज अंबु बिनु, रवि वाहिन हित होय।।

सूर्य को कमल का मित्र माना जाता है, और उसके उदित होते ही कमल खिल जाता है। किन्तु यदि सरोवर का जल सूख जाये तो कमल भी सूख जाता है, और सूर्य उसकी कोई सहायता नहीं कर पाता। यही दशा समाज में निर्धन व्यक्ति की होती है। जब तक उसके पास धन नहीं होता, तब तक उसका कोई भी मित्र नहीं होता। समाज में सभी धनवान के ही हितैपी और मित्र होते हैं।

जो व्यक्ति उत्तम स्वभाव के होते हैं उनका कुसंगति भी कुछ नहीं बिगाड़ सकती। जैसे, चन्दन के वृक्ष पर विषधर सर्प चिपटे रहते हैं, किन्तु उनका चन्दन के वृक्ष पर कोई प्रभाव नहीं होता–

जो रहीम उत्तम प्रकृति, का करि सकत कुसंग।
चन्दन विष व्यापत नहीं, लपटे रहत भुजंग।।

प्रकृति के उपकरणों के माध्यम से अनेक कवियों ने अन्योक्तिपूर्ण वर्णन किए है। तुलसीदास कहते हैं –

तुलसी पावस के समय, धरी कोकिलन मौन।
अब तो दादुर बोलिहैं, हमें पूछिहैं कौन ?

यही भाव रहीम ने भी अपने इस दोहे में व्यक्त किया है–

पावस देखि रहीम मन, कोयल साधे मौन।
अब दादुर दक्ता भए, हमको पूछत कौन ?

इस दोहे में रहीम ने अन्योक्ति द्वारा अपनी उस दशा का वर्णन किया है, जब उन्हें जहांगीर ने सभी अधिकारों से वंचित कर दिया था। तब जहांगीर के मन्त्री के दरबारी बन गए थे, जो रहीम के समय में नगण्य थे। ऐसी ही एक अन्योक्ति यह भी है–

रहिमन अब वे बिरछ कहं, जिनकी छांह गम्भीर।
बागन बिच–बिच देखिअत, सेंहुड़ कुंज करीर।।

अतः कहा जा सकता है कि रहीम ने प्रकृति के उपकरणों के अपनी कल्पना शक्ति से अत्यन्त भावपूर्ण प्रयोग किए हैं।

रहीम को हिन्दू–धर्म शास्त्रों का भी गम्भीर ज्ञान था, और उस ज्ञान के इन्होंने बड़ी ही कुशलता से काव्यमय प्रयोग किए हैं। रामायण में हनुमान द्वारा संजीवनी के पर्वत को उठाने का वर्णन है। इसी वर्णन का उपयोग रहीम ने कितनी भावमयता से किया है–

ओछो काम बड़े करै, तो न बड़ाई होय।
ज्यों रहीम हनुमन्त को, गिरधर कहै न कोय।।

श्रीकृष्ण ने ब्रजवासियों की रक्षा के लिए छोटे–से गोवर्धन पर्व को उठा लिया था तो उन्हें गिरधर या गिरिधारी कहा जाने लगा। उन्हें यह प्रसिद्धि इसीलिए मिली, क्योंकि वे भगवान थे। इसके विपरीत, हनुमान संजीवनी पर्वत को लेकर कई योजनाओं तक आकाश में उड़े, किन्तु उन्हें कोई भी गिरिधारी नहीं कहता, क्योंकि वे श्रीकृष्ण की अपेक्षा छोटे थे। वास्तव, में छोटे व्यक्ति यदि बड़ा काम भी कर देते हैं तो उन्हें उसके लिए कोई प्रसिद्धि नहीं मिलती।

लक्ष्मी को विष्णु भगवान की पत्नी माना जाता है, और चंचल भी। विष्णु भगवान को पुरातन पुरुष भी कहते हैं। पुरातन का एक अर्थ होता है पुराना या बुढ्ढा। इसी अर्थ को लेकर कवि का यह कल्पना–विधान कितना मार्मिक है–

कमला थिर न रहीम कहि, यह जानत सब होय।
पुरुष पुरातन की अधू, क्यों न चंचला होय।।

समाज में यह देखा जाता है कि यदि पत्नी युवा हो और पति वृद्ध हो, तो वह प्रायः चंचल बन जाती है। शास्त्रों की इसी मान्यता का कवि ने अत्यन्त प्रभावपूर्ण वर्णन किया है। इसी प्रकार–

छिमा बड़ेन को चाहिए, छोटेन को उतपात।
का रहीम हरि को घट्यो, जो भ गु मारी लात।।

कहावत है कि हरि से अप्रसन्न होकर भृगु ऋषि ने उनके वक्षस्थल पर लात मार दी थी, जिसके चिह्न आज भी हरि के वक्षस्थल पर विद्यमान हैं। तब सर्वशक्तिमान हरि हंसकर उनके पैर को दबाने लगे, ताकि उनके पैर में आई हुई पीड़ा शान्त हो जाये। इसी घटना के आधार पर हीम ने अपनी कल्पना–शक्ति से महापुरुषों के चरित्र की महत्ता का कितना सटीक वर्णन किया है।

धूर धरत नित सीस पै, कह रहीम केहि काज।
जेहि रज मुनि–पत्नी ती, सो ढूंढत गजराज।।

राम ने गौतम मुनि के शाप से शिला बनी हुई अहिल्या का अपनी चरण–रज से छूकर उद्धार कर दिया था। स्नान करने के बाद हाथी भी अपने सिर पर धूल डालता रहता है। इन दो घटनाओं के आधार पर कवि ने यह कल्पना की है कि जिस धूमिल से अहिल्या का उद्धार हुआ था, उसी को हाथी अपने सिर पर डाल–डालकर ढूंढ रहा है।

बसि कुसंग चाहत कुसल, यह रहीम जिय सोस।
महिमा घटी समुद्र की, रावन बस्यो परोसा।।

राम ने जब लंका पर चढ़ाई की थी तो उन्होंने समुद्र पर पुल बांध दिया था, जो समुद्र की महिमा के प्रतिकूल है। इस घटना को आधार बनाकर कवि की कल्पना यह है कि चूंकि समुद्र के पड़ोस में दुष्ट रावण आ बसा था, इसीलिए उसे बंधना पड़ा, और अपनी मर्यादा से हाथ धोना पड़ा। वस्तुतः दुष्ट व्यक्ति के साथ रहने से कोई भी कुशल नहीं रह सकता।

भावी या उनमान की, पंडव बनहि रहीम।
जदपि गौरि सुनि बांझ है, बरू है सम्भु अजीम।।

हिन्दू–शास्त्रों में भाग की प्रबलता सर्वत्र मान्य रही है। उसका प्रतिपादन करते हुए रहीम ने कहा है कि यद्यपि गौरी को पुत्रवती बनाने में समर्थ है, तथापि वह स्वयं बन्ध्या है। इसी प्रकार गौरीपति शंकर महादेव है, समस्त जगत का कल्याण करने वाले और सभी की मनोकामनाओं की पूर्ण करने

वाले हैं, परन्तु वे भी अपने तथा गौरी के सन्तान होने के दुःख को दूर नहीं कर सके हैं।

मांगे घटत रहीम पव, कितौ करौ बढ़ि काम।
तीन पैग बसुधा करी, तऊ बावनै नाम।।

भगवान विष्णु जब राजा बलि के द्वार याचक बनकर गए तो उन्होंने वामनावतार का रूप धारण कर लिया था। बाद में उन्होंने इतना विशाल रूप बना लिया कि अपनी तीन डगों में ही सारी पृथ्वी को नाप लिया। चूंकि उन्होंने याचना के लिए अपना लघु रूप बनाया था, इसीलिए उनका नाम वामन तो है, पर विशाल नहीं। याचना करने से सभी का पद घट जाता है, फिर चाहे वह कितना ही बड़ा काम क्यों न करे।

मान सहित विष खाय के, सम्भु भये जगदीस।
बिना मान अमृत पिये, राहु कटायो सीस।।

जब समुद्र–मन्थन हुआ था तो उसमें से जो चौदह रत्न निकले थे, उनमें हलाहल विष भी था और अमृत भी था। सभी सुर–असुरों की प्रार्थना पर शंकर ने वह विष पी लिया, जिससे सभी ने उनकी वन्दना की। इसके विपरीत, राहु ने सुरों की पंक्ति में बैठकर धोखे से अमृतपान किया, जिससे कुद्ध होकर विष्णु भगवान ने उसक सिर काट लिया। इसी कथा के आधार पर, रहीम ने मानापमान का उक्त वर्णन किया है।

रहीम का नीति–काव्य अत्यन्त सशक्त एवं समृद्ध है। इस काव्य में रहीम की बहुज्ञता एवं मनोरम कल्पना का विधान परिलक्षित होता है। कुछ उदाहरण प्रस्तुत है–

अरज गरज मानै नहीं, रहिमन ए जन चारि।
रिनियां राजा, मांगता, काम–आतुरि नारि।।

अर्थात् ऋणी, राजा, याचक और कामातुर नारी किसी भी मर्यादा को नहीं मानते।

उरग, तुरग नारी, नृपति, नीच जाति, हथियार।
रहिमन इन्हें संभारिए, पलटत लगै न बार।।

सांप, घोड़ा, नारी, राजा, नीच जाति का मनुष्य और हथियार, इनको सम्भाल, कर रखना चाहिए, क्योंकि इन्हें पलटते हुए देर नहीं लगती।

रहिमन असमय के परे, हित अनहित ह्वै जाय।
बधिक बधै मृग बान सों, रुधिरै देत बताय।।

विपत्ति पड़ने पर मित्र भी शत्रु हो जाते हैं। जैसे, शिकारी के बाण से घायल मृग का खू शिकारी को उसका पता बता देता है। और तब शिकारी उसे पकड़कर उसका वध कर देता है।

रहिमन अंसुआ बैन ढरि, जिय दुःख प्रकट करेइ।
जाहि निकारो गेह तें, कस न भेद कहि देइ।।

एक साधारण–सी घटना के द्वारा रहीम ने राजनीति के कितने गहरे सिद्धान्त का उद्‌घाटन कर दिया है। आंखों से आसूं निकलकर हृदय में छिपे दुःख को प्रकट कर देते हैं। इसी प्रकार यदि किसी को घर से निकाल दिया जाये तो वह सारे रहस्यों का भंडाफोड़ कर देता है।

इसी प्रकार की अनेक नीतिपूर्ण सूक्तियों से रहीम–काव्य भरा पड़ा है।

कवि को अपने भावों को व्यक्त करने के लिए काव्य–रुढियों का भी आश्रय लेना पड़ता है। काव्य–रुढ़ि उन मान्यताओं को कहते हैं जो काव्य में ही, प्रचलित होती है, वास्तविक जगत से उनका कोई सम्बन्ध नहीं होता। जैसे, चकोर आग नहीं खाता, किन्तु काव्य में माना जाता है कि वह आग खाता है। अन्य अनेक कवियों की भांति रहीम ने भी इस काव्य रुढ़ि का प्रभावोत्पादक प्रयोग किया है–

अनुचित उचित रहीम लघु, करहिं बड़ेन के जोर।
ज्यों ससि के संजोग तें, पचवत आगि चकोर।।

अन्य कवियों ने इस काव्य–रुढ़ि का प्रयोग प्रायः आदर्श प्रेम अभिव्यंजना के लिए किया है, किन्तु रहीम का वक्तव्य भिन्न है। वे कहते हैं कि बड़ों के दबाव में आकर ही छोटे उचित–अनुचित कार्य करने को विवश होते हैं, जिस प्रकार चन्द्रमा के कारण ही चकोर आग खाता है।

मछली को प्रेम का आदर्श तथा भौरे को अत्यन्त स्वार्थी माना गया है। मछली का जल से अटूट प्रेम होता है, इसीलिए वह जल से बिछुड़ने पर मर जाती है। भौंरा कमल से प्रेम तो करता है, परन्तु यदि उसे कमल न मिले तो वह दूसरे पुष्पों पर भी जा बैठता है। इसी काव्य–मान्यता को रहीम ने इस प्रकार व्यक्त किया है–

धनि रहीम गति मीन की, जल बिछुरत जिय जाय।
जिअत कंज तजि अनत बसि, कहा भौंरा को भाय।।

इस प्रकार,रहीम का कल्पना–विधान सरल एवं प्रभावोत्पादक है, किन्तु कहीं–कहीं इनके कल्पना–विधान में क्लिष्टता एवं विलक्षणता भी परिलक्षित होती है। यथा–

पसरि पत्र झम्पहि पितहि, सकुचि देत ससि सीत।
कहु रहीम कुल कमल के, को बैरी को मीत।।

कमल और चन्द्रमा दोनों की उत्पत्ति सागर से ही हुई है। अतः ये दोनों भाई–भाई है। जब सूर्य की प्रखर किरणें जल में पड़ती है तो कमल अपने पिता जल को उससे बचाने के लिए अपने पत्तों को फैला देता है, किन्तु जो चन्द्रमा संकोच–सहित उसे शीतलता प्रदान करता है, वही उसे सुखा देता है, और जो सूर्य अपनी प्रखर किरणों से छूता है, वही उसे प्रफुल्लित रखता है। अतः यह कहना बहुत कठिन है कि इस संसार में कौन किसका शत्रु है, और कौन किसका मित्र है ? प्रत्यक्ष रूप से जो शत्रु दिखाई देता है, वह मित्र हो सकता है, और जो मित्र दिखाई देता है, वह शत्रु हो सकता है।

इसमें सन्देह नहीं कि इस दोहे का कल्पना–विधान क्लिष्ट है।

पन्नग बेलि पतिब्रता, रति सम सुनो सुजान।
हिय रहीम बेली वही, सत जोजन दहियान।।

इस दोहे में कवि ने पान की बेल और पतिव्रता नारी दोनों की समानता वर्णित की है। जिस प्रकार तरी से उत्पन्न पान की बेल पाले से नष्ट हो जाती है, उसी प्रकार पतिव्रता नारी भी अपने ही सतीत्व के बल पर सती हो जाती है, क्योंकि वह अपनी शक्ति से ही तो वह अग्नि करती है, जिसमें वह भस्म हो जाती है।

इस दोहे में प्रयुक्त कल्पना–विधान में प्रसादत्व का नितान्त अभाव है जिसके कारण भावमयता को भी गहरी क्षति पहुंची है।

रहिमन कबहुं बड़ेन के, नाहिं गर्व को लेस।
भार धरैं संसार को, तऊ कहावत सेस।।

यह माना जाता है कि शेषनाग पृथ्वी को अपने फणों पर धारण किये हुए हैं। वे इतने भारी बोझ को धारण करके भी अपनी शक्ति पर गर्व नहीं करते हैं। फिर भी उन्हें 'शेष' यानी 'शून्य' कहा जाता है। यहां 'शेष' शब्द की श्लिष्टता से कवि की कल्पना ने चमत्कार की सृष्टि अवश्य कर दी है, किन्तु यह कल्पना भावोत्कर्षक नहीं है।

हाथी अत्यन्त शक्तिशाली होता है, परन्तु वह अपनी सूंड को पृथ्वी पर घिसेटता हुआ चलता है। इस दृश्य पर कवि–कल्पना यह है कि चूंकि प्रभु हरि ने उसकी ग्राह से रक्षा की थी, अतः वह प्रभु के प्रभुत्व को मानता हुआ, दीनता दिखाने के लिए, अपनी नाक को घसीटता हुआ चल रहा है–

रहिमन करि सम बल नहीं, मानत प्रभु की धाक।
दांत दिखावत दीन ह्वै, चलत घिसावत नाक।।

निस्सन्देह, यह कल्पना–विधान भावपूर्ण तो है, परन्तु भाव की अपेक्षा इसमें विलक्षणता का तत्व ही अधिक है।

रहिमन खोटी आदि की, सो परिनाम लखाय।
जैसे दीपक तक भखै, कज्जल वमन कराय।।

जहां आरम्भ ही दोषपूर्ण होता है, उसका परिणाम भी दोषों से ही भरा होता है। जैसे जो दीपक अन्धकार का भक्षण करता है, वह कालिमा का ही वमन करता है। कवि की यह कल्पना विलक्षण भी है, और भावपूर्ण भी।

रहिमन जाके बाप को, पानी पिअत न कोय।
ताकी गैर अकास लौं, क्यों न कालिमा होय।।

इस दोहे में कवि का कल्पना–विधान विलक्षण है। समुद्र खाता होता है, अतः उसके जल को कोई नहीं पीता। समुद्र बादल का पिता है। पिता के दोषों से पुत्र भी अवश्य प्रभावित होता है, तभी तो आकाश तक फैला हुआ बादल कालिमा से परिपूर्ण होता है।

बिरह रूप घन तम भयो, अवधि आस उद्योत।
ज्यों रहीम भादों निसा, चमकि जात खद्योत।

इसमें कवि की कल्पना–क्लिष्टता स्पष्ट है। किसी विरहिणी की आशा का वर्णन करते हुए कवि ने कहा है कि विरह मानो गहरा अन्धकार है, और मिलने की आशा मानो खद्योत है। जिस प्रकार भादों मास की रात्रि में खद्योत बार–बार चमक जाता है, उसी प्रकार उस विरहिणी के मन में अपनी भारी विरह–व्यथा में भी अपने प्रियतम से मिलने की आशा बार–बार जग जाती है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि रहीम का कल्पना–विधान अत्यन्त समृद्ध विलक्षण एवं भावपूर्ण है।

संदर्भ–सूची

- ✓ हिन्दी साहित्य का इतिहास–आचार्य रामचन्द्र शुक्ल
- ✓ हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास खण्ड–एक एवं खण्ड–दो– गणपतिचन्द्र गुप्त
- ✓ हिन्दी साहित्य का इतिहास पुनः लेखन की आवश्यकता– पुरवराज मारु
- ✓ हिन्दी साहित्य– एक परिचय – फणीश सिंह
- ✓ हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास – बच्चन सिंह
- ✓ हिन्दी साहित्य का अलोचनात्मक इतिहास– डॉ0 रामकुमार वर्मा
- ✓ हिन्दी साहित्य का इतिहास– लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय
- ✓ हिन्दी साहित्य का संक्षिप्त इतिहास– लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय
- ✓ हिन्दी साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास– विजयपाल सिंह

Copyright © 2016, Dr. R.P.Verma. This is an open access refereed article distributed under the creative common attribution license which permits unrestricted use, distribution and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.